# विश्वविजयी हिंदी का आत्म मुग्ध व कृपण हिंदी समाज

हिंदी संसार को प्रसन्न करने वाली दो बड़ी बातें इस बीच हुई हैं। पहली, गीतांजलि श्री के उपन्यास रेत समाधि और उसके अंग्रेजी अनुवाद टूम्ब ऑफ सैन्ड को अंतरराष्ट्रीय बुकर पुरस्कार का मिलना और दूसरी, उसके लगभग 15 दिन बाद संयुक्त राष्ट्र संघ की आमसभा में कुछ और भाषाओं के साथ हिंदी का भी पहली बार संयुक्त राष्ट्र संबंधित गतिविधियों और सूचनाओं को प्रसारित करने के लिए उल्लेख किया जाना। पहली खबर ने जहाँ सिर्फ हिंदी ही नहीं बल्कि सारी भारतीय भाषाओं के साहित्यकारों और प्रकाशकों को उत्साहित किया वहीं दूसरी खबर ने हिंदी वालों को यह चिर प्रतीक्षित संतोष दिया कि उनकी हिंदी को संयुक्त राष्ट्र संघ में अंततः प्रवेश मिल गया है।

दोनों उपलब्धियों को लेकर हिंदी वालों में खासे रोचक विभ्रमों की स्थिति बनी रही। पहले बूकर को ले लें। कई हिंदी वालो ने इसे हिंदी उपन्यास रेत समाधि का नहीं उसके डेज़ी रॉकवेल के अंग्रेजी अनुवाद टूम्ब ऑफ सेंड का सम्मान माना। यह तक कहा गया कि इस सम्मान पर खुश होना हिंदी वालों में स्वाभिमान की कमी को दिखाता है, औपनिवेशिक दासता का चिन्ह है। लेखन की भाषा में शैली, प्रवाह, प्रयोग के स्तर पर अनूठे नवाचार करने वाले इस उपन्यास के कुछ पन्नों को सामाजिक मीडिया में प्रसारित करके उपहास किया गया। कई महान चिंतकों ने इसे अपठनीय कूड़ा, हिंदू आस्थाओं का अपमान करने वाला तक बता दिया। ये इतने महान लोग थे कि ३७५ पृष्ठों के उपन्यास के एक या दो पैरे पढ़ कर ही उस पर फतवे जारी कर देने की दिव्यदृष्टि से संपन्न थे।

पता नहीं भारतीय राज्य के उच्चतम शिखरों पर बैठे लोगों को इन महापुरुषों की आलोचना में दम लगा या उनके साहित्यिक गुप्तचरों ने गीतांजलि श्री की राष्ट्रभक्ति को संदिग्ध बताया लेकिन कुल मिलाकर प्रधानमंत्री, राजभाषा हिंदी के प्रचार प्रसार के लिए जिम्मेदार गृहमंत्री, विदेशमंत्री, शिक्षा मंत्री, संस्कृति मंत्री, देश की सत्तारूढ़ पार्टी के अध्यक्ष सहित हिंदी प्रदेशों के सभी भाजपा मुख्यमंत्रियों में से किसी ने भी इस पुरस्कार का स्वागत करने की जरूरत नहीं समझी और न ही लेखिका गीतांजलि श्री को बधाई देने की।

स्मरण रहे कि ये वे शक्तिशाली महापुरुष हैं जो हर मौके पर अपना हिंदी प्रेम दिखाना नहीं भूलते।

दूसरी ओर एक वर्ग मानता है कि इस पुरस्कार ने विश्व साहित्य में हिंदी के लिए एक अभूतपूर्व, ऐतिहासिक और बहुत ऊँची जगह बनाई है। श्रेष्ठ विश्व साहित्य की श्रेणी में धमाकेदार प्रवेश के लिए हिंदी के पास इस अंतरराष्ट्रीय पुरस्कार से बड़ा बस एक ही माध्यम हो सकता था- साहित्य का नोबेल।

जब किसी भी अंतरराष्ट्रीय साहित्य पुरस्कार की बात होती है तो उसमें यह तथ्य अनिवार्यतः रहता ही है कि ऐसे पुरस्कार का चयन बिना अनुवाद के नहीं हो सकता। अंतरराष्ट्रीय बूकर पुरस्कार तो दिया ही दो शर्तों के साथ किसी गैर-अंग्रेज़ी पुस्तक को जाता है- पहली, मूल पुस्तक किसी भी भाषा की हो

उसका अंग्रेजी अनुवाद जरूरी है और दूसरी, प्रकाशक इंग्लैंड या आयरलैंड का हो। अनुवाद तो तभी होगा जब मूल पुस्तक होगी। यह इस पुरस्कार की प्रशंसनीय विशिष्टता है कि वह लेखक और अनुवादक दोनों को बराबर का सम्मान और बराबर की पुरस्कार राशि देता है। इसलिए लंदन में गीतांजलि श्री और डेज़ी रॉकवेल को एक साथ पुरस्कृत किया गया।

हम एक ऐसे निज़ाम में है जिसमे किसी भी विधा में किसी भी क्षेत्र में किसी भी भारतीय द्वारा कोई अंतरराष्ट्रीय स्तर पर पुरस्कार, मेडल, सम्मान या उपलब्धि हासिल की जाती है तो उससे हमारे राजकीय महापुरुष उत्साह से बधाई देते हैं, ट्वीट करते हैं, फोन करते हैं, नकद ईनाम देते हैं और ज़्यादा ही अच्छी उपलब्धि हो तो बुलाकर सम्मानित करते हैं। चैनलों, अखबारों में ये खबरें आती हैं। अगर गीतांजलि श्री को बड़ा सम्मान छोड़िए बधाई की एक मामूली ट्वीट के योग्य भी नहीं समझा गया तो निश्चय ही इसकी जिम्मेदार वह स्वयं हैं। या तो वह पर्याप्त रूप से देशभक्त नहीं है और यदि हैं तो इतनी भोली हैं कि भारत की महान संस्कृति को अपनी अपसंस्कृति के माध्यम से नष्ट करने में लगी हुई पश्चिमी शक्तियों के षडयंत्र का शिकार हो गई हैं।

एक तीसरा कारण भी हो सकता है। यह कि अंतरराष्ट्रीय बूकर पुरस्कार के निर्णायक मण्डल के सभी लोग निहायत मूर्ख किस्म के लेखक हैं जिन्हें साहित्य की कोई सही समझ नहीं है। वरना वे ऐसे 'रद्दी' उपन्यास को क्यों चुनते जबकि एक से एक महान 'राष्ट्रवादी' साहित्यकार भारत में भरे हुए हैं। और यह तो कारण हो ही सकता है कि उपन्यास की अमेरिकन अनुवादक डेज़ी रॉकवेल के अनुवाद की गुणवत्ता इतनी असाधारण रूप से उत्कृष्ट थी कि मूल उपन्यास के घटिया होते हुए भी उसे पुरस्कार योग्य माना गया।

जो भी हो, रेत समाधि भले ही हिंदी प्रकाशनों की दुनिया में 45,000 से ज्यादा प्रतियों का कीर्तिमान बना चुकी हो और अब 1,00,000 के लगभग निश्चित और अभूतपूर्व लक्ष्य की ओर बढ़ रही हो, भले ही मुख्यत: अंग्रेजी की किताबों से सुशोभित रहने वाली पुस्तक दूकानें रेत समाधि नामक हिंदी उपन्यास को सबसे प्रमुख जगह दे रही हों, भले ही एमेजॉन जैसे ऑनलाइन पुस्तक विक्रेताओं की सूची में रेत समाधि तीन हफ्ते से लगातार नंबर एक बनी हुई हो, हमारे राष्ट्रवादी हिंदी साहित्य जगत, सरकारी संस्थाओं और शासकीय विभूतियों ने उसे एक मौन राजकीय समाधि दे दी है।

इसे बौद्धिक विपन्नता और हृदय की क्षुद्रता कहने वाले नासमझ और निकृष्ट बुद्धिजीवी भी ज़रूर राष्ट्रविरोधी शक्तियों से मिले हुए हैं। इसलिए भले ही इस पुस्तक-पुरस्कार ने विश्व साहित्य में हिंदी सहित सभी भारतीय भाषाओं के अत्यंत उत्कृष्ट लेकिन अल्पज्ञात साहित्य के लिए वैश्विक दृश्यता और प्रतिष्ठा का एक महाद्वार खोला हो, भले ही सारी भारतीय भाषाओं के लेखक और प्रकाशक अपनी-अपनी भाषाओं और कृतियों को भी वैश्विक ध्यान-सम्मान मिलने की संभावनाओं से उत्साहित हुए हों इसको हिंदी की सच्ची वैश्विक उपलब्धि नहीं माना जा सकता। इतना क्या कम है कि रेत समाधि को बूकर मिलने के पीछे के सारे राष्ट्रविरोधी-धर्मविरोधी तत्वों और षडयंत्रों की जाँच के आदेश नहीं दिए गए हैं।

अब दूसरी उपलब्धि की बात कर लें। पहले तो कई हिंदी अखबारों, अज्ञात कुल-वय-शील पोर्टलों और

फिर चैनलों ने खूब उत्साह से भर कर हिंदी को संयुक्त राष्ट्र संघ की आधिकारिक भाषा बनने की घोषणा कर दी, बधाइयां देनी शुरू कर दीं। हिंदी का सामूहिक दिल बल्लियों उछलने लगा। अब तो हिंदी के विश्वभाषा बनने का स्वप्न साकार होने में कोई देर न थी। हिंदी व्हाट्सऐप समूहों पर समारोह होने लगे।

आभासी लड्डुओं का पदार्पण होने ही वाला था कि कुछ विघ्नसंतोषियों ने ज़रा ध्यान से प्रामाणिक समाचार पत्रों की खबरों को पढ़ने की गुस्ताखी कर दी। पता चला मामला इतना सीधा नहीं है। यह बात सामने आई कि पुर्तगाली, स्वाहिली, बांग्ला, उर्दू और फारसी भी इस सूची में शामिल हैं।

फिर कुछ सड़ियल सिरफिरों ने स्वयं संयुक्त राष्ट्र की वेबसाइट पर जाकर बहुभाषावाद के उस प्रस्ताव को पढ़ा जिसके 42वें अनुच्छेद में हिंदी का उल्लेख था। तब यह स्पष्ट हुआ कि लगभग 80 देशों के समर्थन से पारित हुए इस प्रस्ताव में संयुक्त राष्ट्र महासचिव को बधाई दी गई थी कि उन्होंने संयुक्त राष्ट्र की १९४६ की पहली आमसभा में पारित बहुभाषावाद का समर्थन करनेवाली नीति को कार्यान्वित किया है। राष्ट्रसंघ की छह आधिकारिक भाषाओं के अलावा अन्य गैर-आधिकारिक भाषाओं में भी राष्ट्र संघ की गतिविधियों का प्रचार व प्रसार प्रारंभ किया है। प्रस्ताव में उन्हें प्रोत्साहित किया गया कि वे विश्व की अधिक से अधिक भाषाओं में राष्ट्रसंघ की सामग्री का प्रचार-प्रसार करते हुए बहुभाषावाद की शक्ति को बढ़ाएं और विश्व नागरिकों को राष्ट्र संघ की गतिविधियों के बारे में अवगत कराएं।

फिर अंत में जब संयुक्त राष्ट्र में भारत के स्थायी प्रतिनिधि तिरूमूर्ति का आमसभा में वक्तव्य सुना गया तो कुछ और बातें स्पष्ट हुई। उन्होंने सबसे पहले इस प्रस्ताव के सह-प्रायोजक और सह-समन्वयक देशों एंडोरा और कोलंबिया को धन्यवाद दिया और प्रसन्नता व्यक्त की कि पहली बार संयुक्त राष्ट्र में हिंदी का उल्लेख किया गया।

इस बात को अलग-अलग समाचार मंचों ने अलग-अलग तरह से पेश किया। एक प्रख्यात देशभक्त चैनल ने मैच जीतते हुए देश की टीम की कमेंटरी जैसे वीरोचित उत्साह से भरे वॉइस ओवर के साथ बार-बार प्रधानमंत्री के फोटो और वीडियो लगाते हुए भारत और भारत सरकार की इस उपलब्धि का यशगान किया। कुछ दूसरे संयमित अखबारों ने अपने शीर्षकों में लिखा कि संयुक्त राष्ट्र द्वारा स्वीकृत यह प्रस्ताव भारत द्वारा प्रायोजित था। अगर संयुक्त राष्ट्र में भारतीय प्रतिनिधि तिरूमूर्ति के भाषण को ध्यान से न सुना जाए तो पता नहीं चलेगा कि भारत इसके कई सह-प्रायोजकों में से एक था, अकेला या पहला नहीं। आमसभा में इस प्रस्ताव को सबसे पहले भारत ने नहीं एंडोरा ने पेश किया।

यह सब बताने पर इस लेखक पर यह आरोप लगाया जा सकता है और लगाया ही जाएगा कि वह देश और हिंदी की इतनी बड़ी उपलब्धि पर भी खुश नहीं है और उसमें बिना बात बाल की खाल निकाल कर उसे छोटा करने का प्रयास कर रहा है। उत्तर में सविनय निवेदन यही है कि हम हिंदी वाले झुनझुनों पर बच्चों की तरह खुश होना छोड़ें और तथ्यों की कड़ी जमीन पर खड़े होकर अपने आप को और अपनी भाषा को उसकी संपूर्ण पारिस्थितिकी और संदर्भों में रख कर देखना शुरू करें। भावनात्मक नहीं तथ्यात्मक, यथार्थपरक दृष्टि अपनाएँ। भोली भावुकताओं से हिंदी का भला नहीं होगा।

जब से श्रीमती इंदिरा गाँधी द्वारा 1975 में विश्व हिंदी सम्मेलनों की नींव रखी गयी तब से 11

सम्मेलनों में यह संकल्प बार-बार दोहराया गया है कि भारत हिंदी को संयुक्त राष्ट्र की आधिकारिक भाषा बनाने का पूरा प्रयास करे। 2007 के विश्व हिंदी सम्मेलन का तो उद्घाटन ही न्यूयॉर्क में संयुक्त राष्ट्र के सभागार में तत्कालीन महासचिव बान की मून के द्वारा हुआ था। उनके सामने भी यह मांग रखी ही गई थी। पर उस प्रतीकात्मक प्रसन्नता के आगे बात नहीं बढ़ी।

इस बारे में सबसे ठोस प्रयास भारत की विदेश मंत्री के रूप में स्वर्गीय श्रीमती सुषमा स्वराज ने किए थे यह बात असंदिग्ध रूप से कही जा सकती है। पिछले कई दशकों में हिंदी के प्रति सच्ची संवेदना, समझ, प्रतिबद्धता और गंभीरता से काम करने वाला सुषमा जी के अलावा कोई नहीं हुआ। लेकिन जैसा कि उन्होंने स्वयं हिंदी के प्रमुख संपादकों के साथ एक विशेष बैठक में बताया था, इस काम की दो अनिवार्य आवश्यकताएं हैं जिनके पूरे हुए बिना हिंदी संयुक्त राष्ट्र की सातवीं आधिकारिक भाषा नहीं बन सकती।

ये दो शर्तें हैं – संयुक्त राष्ट्र के दो तिहाई सदस्य देश यानी १२८ देश इस प्रस्ताव का समर्थन करें और सभी १९३ सदस्य देश इस पर होने वाले व्यय को आनुपातिक रूप से वहन करने को तैयार हों। यह टेढ़ी खीर है। अब तक संभव नहीं हुई है।

इसके बारे में दिसंबर 2021 में भारत के विदेश राज्य मंत्री मुरलीधरन ने भी संसद में स्थिति स्पष्ट की। उन्होंने बताया कि हिंदी को संयुक्त राष्ट्र संघ की आधिकारिक भाषा के रूप में स्वीकार करने के लिए और समूचे संयुक्त राष्ट्र तंत्र में उसे लोकप्रिय बनाने के लिए भारत सरकार निरंतर प्रयास कर रही है। सन् 2018 में संयुक्त राष्ट्र और भारत सरकार के बीच एक विशेष समझौता किया गया ताकि संयुक्त राष्ट्र तंत्र में हिंदी को प्रोत्साहित किया जा सके। दो साल के लिए किया गया यह समझौता संयुक्त राष्ट्र द्वारा किए जाने वाला इस तरह का पहला समझौता था। इसे 2019 में और आगे बढ़ाया गया और अब यह मार्च 2025 तक लागू रहेगा।

इसके तहत भारत सरकार लगभग $8,00,000 प्रतिवर्ष संयुक्त राष्ट्र को देती है। समझौते के अंतर्गत संयुक्त राष्ट्र कार्यालय फेसबुक, ट्विटर और इंस्टाग्राम पर हिंदी में खाते संचालित करता है, संयुक्त राष्ट्र समाचारों की हिंदी वेबसाइट चलाता है, संयुक्त राष्ट्र समाचारों का हिंदी समाचार रेडियो बुलेटिन साउंडक्लाउड पर साप्ताहिक रूप से प्रसारित किया जाता है, एक हिंदी ब्लॉग का संचालन किया जाता है और संयुक्तराष्ट्र समाचार की मोबाइल ऐप का एक हिंदी एक्सटेंशन भी एंड्रॉयड तथा आईओएस ऑपरेटिंग सिस्टमों में उपलब्ध कराया गया है। इन सरकारी प्रयासों के अलावा यह हम सब जानते हैं कि प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी स्वयं हर विदेशी दौरे में लगभग हर जगह हिंदी में ही बोलते हैं और इस तरह हिंदी को वैश्विक राजनय के उच्चतम स्तर पर प्रतिष्ठित कर रहे हैं। वे 2014, 2019, 2020 और 2019 में संयुक्त राष्ट्र आमसभा को हिंदी में संबोधित कर चुके हैं और भारत के तत्कालीन विदेशमंत्री आमसभा को 2015, 2016, 2017 और 2018 में हिंदी में संबोधित कर चुके हैं।

हम आशा करें कि चूँकि भारत विश्वगुरु के पद पर प्रतिष्ठित होने ही वाला है, आर्थिक महाशक्ति बनने ही वाला है तो शीघ्र ही हिंदी भी अंग्रेजी, रूसी, मंदारिन, अरबी, फ्रेंच और स्पेनिश के बाद संयुक्त राष्ट्र की सातवीं आधिकारिक भाषा बन ही जाएगी। तब तक हम उसके स्वाहिली, बांग्ला, उर्दू और पुर्तगाली

के साथ संयुक्त राष्ट्र में उल्लेख की अधिकारी बनने और उसके समाचारों का माध्यम बनने का उत्सव अवश्य ही मना सकते हैं, इस प्रवेश का हिंदी के हित में भरपूर लाभ उठा सकते हैं। इसके लिए ज़रूरी है कि संयुक्त राष्ट्र कार्यालय के इन सभी प्रयासों का हम पूरा उपयोग और प्रचार-प्रसार करें।

हिंदी के लिए ये जो दो द्वार खुले हैं इनका सापेक्ष आकलन हम कैसे करें ? इस लेखक की विनम्र राय यह है कि संयुक्त राष्ट्र की आमसभा में हिंदी का उल्लेख होने से कई गुना ज्यादा बड़ा, वज़नी, महत्वपूर्ण और दीर्घकालिक लाभ देने वाला द्वार गीतांजलि श्री की रेत समाधि ने खोला है। किसी भारतीय भाषा को वैश्विक प्रतिष्ठा वाला साहित्यिक पुरस्कार गुरुदेव रवींद्रनाथ टैगोर की बांग्ला काव्य कृति गीतांजलि ने १९१३ में दिलाया था। उसके १०९ साल बाद एक हिंदी उपन्यास ने विश्व के श्रेष्ठतम बौद्धिक और साहित्यिक जगत का ध्यान और सम्मान किसी भारतीय भाषा को दिलाया है।

यह बात हिंदी जगत में शायद कम लोग जानते हैं कि बांग्ला में लिखी गीतांजलि को नोबेल पुरस्कार दिलवाने मैं दो प्रतिष्ठित अंग्रेजी साहित्यकारों ने सहायता की थी। एक थे प्रसिद्ध कवि विलियम बट्लर येट्स और दूसरे थे थॉमस स्टरजी मूर। येट्स ने तो गीतांजलि के अंग्रेजी अनुवाद और संपादन में भी टैगोर की सहायता की थी। मूर ने येट्स के साथ टैगोर और गीतांजलि को ब्रिटिश साहित्य जगत तथा नोबेल समिति से परिचित कराने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी। गुरुदेव ने येट्स के साथ मिलकर अगर उसका अंग्रेजी अनुवाद न किया होता तो गीतांजलि को भी नोबेल पुरस्कार न मिलता।

रेत समाधि के अंग्रेजी अनुवाद को पुरस्कार मिलने की बात करके जो अज्ञानी नाक भौं सिकोड़ रहे हैं उनके लिए यह सामान्य बात समझना जरूरी है कि किसी भी देश, भाषा या संस्थान द्वारा शुरू किया गया हो कोई भी अंतरराष्ट्रीय साहित्य पुरस्कार बिना अनुवाद के संभव ही नहीं है। जिन तीन-चार दूसरे लेखकों की पुस्तकों के साथ रेत समाधि की टक्कर थी वे पहले से ही बहुत प्रतिष्ठित वैश्विक लेखक थे। एक तो नोबेल पुरस्कार जीत चुके लेखक थे। यदि चयनकर्ताओं ने उन लेखकों की कृतियों की तुलना में हिंदी की रेत समाधि को सर्वश्रेष्ठ माना तो यह बहुत असाधारण उपलब्धि है। यह केवल लेखक ही नहीं उसकी भाषा, संस्कृति और देश को एक विशिष्ट सम्मान और स्थान दिलाती है। गीतांजलि श्री को मिला पुरस्कार उनके अपने औदार्यपूर्ण शब्दों में "भारतीय भाषाओं में लेखन की सुदीर्घ परंपरा की नींव पर खड़ा हुआ है।" इस पर प्रश्न खड़े करना केवल अपना अज्ञान, बौद्धिक संकीर्णता, दुराग्रह और ओछापन प्रकट करना है। इससे संसार के बौद्धिक-साहित्यिक जगत में हिंदी को जो प्रतिष्ठा मिली है वह निर्विवाद रूप से अभूतपूर्व, ऐतिहासिक और असाधारण है। उसने समूचे भारतीय भाषा परिवार और भारतीय साहित्यकारों के लिए एक नई वैश्विक राह प्रशस्त की है। अपने ही देश में और अपनी भाषा के लोगों द्वारा उसका समुचित सम्मान न होना, ऐसी मुखर उपेक्षा समूचे देश, राजकीय वर्गों और संपूर्ण हिंदी समाज पर एक अत्यंत दुर्भाग्यपूर्ण टिप्पणी है।

मैं नहीं जानता कि लंदन से लौटने पर गीतांजलि श्री का हवाई अड्डे पर कैसे स्वागत हुआ लेकिन अगर हम सचमुच अपनी बौद्धिक प्रतिभाओ और साहित्यिक रत्नों को सम्मानित करने वाले स्वाभिमानी और भाषाभिमानी समाज होते तो हवाई अड्डे से उनके घर तक गीतांजलि श्री की बड़ी विजय यात्रा निकालते, अब तक उनके दैनिक सम्मानों की झड़ी लगी हुई होती और देश का सर्वोच्च नेतृत्व उन्हें बुला कर विश्वविजेता की तरह सम्मानित करता। गीतांजलि श्री ने सचमुच हिंदी को विश्वविजय दिलाई है।

ऐसा कुछ भी होने की कोई सूचना या संभावना हमें नहीं मिली है तो यह हमारे लिए सामूहिक शर्म की बात है।

(लेखक कई चैनलों संपादक के रूप मे कार्य कर चुके हैं वरिष्ठ पत्रकार, लेखक व टीवी पैनलिस्ट के रूप में हिंदी जगत में अपनी विशिष्ट पहचान रखते हैं)

राहुल देव

१३ जून, २०२२